ISSN-2230-7540

"सुरेन्द्र वर्मा के नाट्य साहित्य में भाषागत प्रयोग"

Neelam Tyagi

Research Scholar,
DTI, Deemed University,
Dayal Baag Agra

Vinita Tyagi

Research Scholar,
DTI, Deemed University,
Dayal Baag Agra

प्राचीन संस्कृत आचार्यों ने शब्द और अर्थ को काव्य का शरीर और रस को आत्मा माना है। जिस प्रकार शरीर से आत्मा की सत्ता का अनुमान लगाया जाता है, उसी प्रकार काव्य की रसानुभूति भाषा के ही माध्यम से सम्भव है। शब्दार्थ का तात्पर्य भाषा से ही है, क्योंकि हमारे जीवन में केवल सार्थक शब्दों का महत्त्व है। सार्थक शब्दों से ही भाषा का निर्माण होता है।

'भाषा' शब्द का व्युत्पत्ति **'भाष्'** धातु से हुई है। जिसका अर्थ हैः–**'बोलना या कहना'** अर्थात् मनोगत भावों का प्रकाशन भाषा के माध्यम से होता है, इसलिए भाषा को अभिव्यक्ति का प्रबलतम साधन माना जाता है।[1]

भाषा भावाभिव्यक्ति का महत्त्वपूर्ण साधन है। भाषा के द्वारा लेखक समाज को जानता है और अपने विचार समाज तक पहुँचाता है। अन्य शब्दों में भाषा भावों और विचारों के परस्पर विनिमय का माध्यम है। नाट्य साहित्य में भाषा का महत्त्व सर्वोपरि है। रचना प्रक्रिया की अवधि में नाटककार सहज भाव से भाषा से जुड़ जाता है और भाषा के ही माध्यम से उसका कृतित्व उद्घाटित होता है। नाटक की बनावट कैसी भी हो किन्तु उसमें कसावट तभी आती है जब उसमें भाषा की बलिष्ठता विद्यमान हो। अतः भाषा मानवीय भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति है।

बाबूराम सक्सैना के अनुसारः– **"जिन ध्वनि चिन्हों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार विनिमय करता है, उसको समष्टि रूप से भाषा कहते है।"**[2]

सुरेन्द्र वर्मा जी एक जागरुक नाटककार हैं। उन्होंने अपनी रुचि, परिवेश और आवश्यकता के अनुकूल भाषिक संरचना का अन्वेषण किया है। उनके नाटकों की भाषा में अरबी–फारसी आदि भाषिक परम्पराओं के शब्दों की स्पृहणीय गूँजें हैं। सुरेन्द्र

ISSN-2230-7540

वर्मा जी ने बोलचाल की सामान्य भाषा के शब्द–विधान को बड़े ही स्वाभाविक रूप में प्रस्तुत किया है। इस प्रक्रिया में कहीं तत्सम, तद्भव, देशज और कहीं अंग्रेजी नए अर्थ के वाहक बनकर आये हैं। वर्मा जी के पास असीमित शब्द भण्डार है। इसमें तत्सम, तद्भव, देशज, अंग्रेजी, संस्कृत और अन्य भाषा और स्रोतों से आये अनेक प्रचलित शब्दों का सुदृढ़ प्रयोग हुआ है। ये शब्द सामान्य लय तथा वैयाकरणिक अनुशासन से मण्डित हो, प्रभावक अर्थवत्ता के साथ प्रयुक्त हुए हैं। सुरेन्द्र वर्मा का भाषा संस्कार आधुनिक हिन्दी नाटकों की विशेष उपलब्धि है। उनकी भाषा में एक आंतरिक लयकारी संगीत है जो हृदय को परिपुष्ट और मुग्ध करता है। सुरेन्द्र वर्मा जी ने अपने **तीन नाटक– 'सेतुबन्ध', 'नायक खलनायक विदूषक'** एवं **'द्रौपदी'** में नाट्य–भाषा के जो नवीन प्रयोग किए है, उनका विवरण इस प्रकार हैः–

1- **सहज व सशक्त भाषाः–** सुरेन्द्र वर्मा जी का भाषा पर सहज अधिकार है। यह सहजता का गुण उन्होंने अपने नाटकों में गहरे से गहरे प्रसंग में दिखाकर उसे सम्प्रेषणीय बना दिया है। उनकी भाषा में इतनी सहजता है कि नाटक का प्रत्येक पात्र आसानी से पाठक तक अपने मन्तव्य को पहुँचा देता है। सहजता के इस गुण के कारण उनके नाटक की भाषा से नीरसता एवं उबाऊपन जैसा दोष दूर हो गया है। सुरेन्द्र वर्मा ने एक ओर तो **'सेतुबन्ध'** और **'नायक खलनायक विदूषक'** नाटक में संस्कृतनिष्ठ व ऐतिहासिक शब्दावली का प्रयोग कर भाषा को सशक्तता प्रदान की है, वहीं दूसरी ओर **'द्रौपदी'** नाटक में बोलचाल की सामान्य शब्दावली का प्रयोग कर भाषा को सहजता प्रदान की है। **'सेतुबन्ध'** नाटक में भाषा की सशक्तता का एक उदाहरण द्रष्टव्य हैः–

उदा.:– " अगर बात उज्जयिनी के दूतों की है, तो निश्चय ही गोपनीय है..... समय पड़े, तो बिना किसी आहट के छोटी–सी रत्नमंजूषा में आजीवन बंद रह सकते हैं।"[3]

2- **प्रवाहमय और लययुक्त भाषाः–** प्रवाहमयता भाषा का प्राणतत्त्व माना जाता है। जिस भाषा में प्रवाहमयता जैसा प्रभावशाली गुण होगा वह स्वतः ही लयपूर्ण बन जाती है। सुरेन्द्र वर्मा जी के प्रमुख नाटकों की भाषा में यह गुण देखने को मिलता है। इनके नाटकों को पढ़ने से पाठक को एक विशेष प्रकार के आनंद का अनुभव होता है। **'द्रौपदी'** नाटक की भाषा में प्रवाहमयता और लयात्मकता का गुण प्रचुर मात्रा में विद्यमान है, उदाहरण द्रष्टव्य हैः–

उदा.:– " अनिलःशनिवार को तुम्हारी क्लास होती है। अलकाः(नाराजगी से) तुम्हें क्या मतलब, होती है कि नहीं होती? अनिलः कहाँ होती है? लाल किले के किसी सुनसान कोने में? कुतुब में किसी झाड़ के पीछे या ओखला में किसी पेड़ के नीचे ?"[4]

3- **प्रतीक एवं बिम्बयुक्त भाषाः–** सुरेन्द्र वर्मा जी ने आधुनिक जीवन की जटिलता और संश्लिष्टता को पकड़ने के लिए अपने नाटकों में प्रतीक एवं बिम्बयुक्त भाषा का सफल एवं नवीन प्रयोग किया है। वर्मा जी की यह भाषा नाटक में उपस्थित अनकही स्थितियों की व्यंजना का माध्यम बनी है। **'नायक खलनायक विदूषक'** नाटक में विदूषक के माध्यम से बिम्ब और **'द्रौपदी'** नाटक में नकाब के माध्यम से प्रतीक का सार्थक व सफल यथास्थिति प्रयोग किया

ISSN-2230-7540

गया है। **'नायक खलनायक विदूषक'** नाटक में बिम्बयुक्त भाषा यथार्थ की पकड़ से अतिरंजित नहीं है बल्कि अधिक रोचक है। निम्न उदाहरण में जो बिम्ब है वह नायक कपिंजल की द्वंद्वपूर्ण आत्मिक मनोदशा है जिसे आत्मसंघर्ष के नाम से भी संबोधित किया जा सकता है:–

उदा.:– **" श्रीमान। मेरी ऊब एक कलासाधक की ऊब है, जो मंच पर भिन्न पात्रों के माध्यम से जीवन को समझना चाहता है, आत्मान्वेषण और आत्माभिव्यक्ति करना चाहता है।"[5]**

4- **व्यंग्यात्मक भाषा:–** सुरेन्द्र वर्मा जी ने अपने नाटकों में आधुनिक जीवन की विद्रूपताओं को व्यंग्य के माध्यम से उभारा है। उनके नाटकीय व्यंग्य संवादों के माध्यम से अभिव्यक्त होते हैं और वास्तविक अर्थ पीछे छिपे रहने पर भी मुखर होते हैं। सुरेन्द्र वर्मा जी ने भावों की विविधता, विषमता और उभयमुखता को उन्मुख करने के लिए व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग किया है। **'द्रौपदी'** नाटक में भी व्यंग्यात्मक भाषा के माध्यम से मनुष्य के अवमूल्यन को पेश किया गया है, उदाहरण द्वारा द्रष्टव्य है:–

उदा.:– **".....अगर अंजना के पहले रंजना थी, तो अंजना के बाद वंदना होगी– एक नयी किताब पढ़ने को। एक नया नोट भुनाने को। एक नया जिस्म–जानने को।"[6]**

5- **ध्वनि–चयन:–** सुरेन्द्र वर्मा जी ने अपने इन नाटकों में नाटकीय स्थिति को उभारने, पात्र की मानसिक लय को स्पष्ट करने तथा वातावरण के साथ–साथ स्वतंत्र रूप से दर्शक के मन में किसी बिम्ब को उजागर करने के लिए ऐसे शब्दों का चयन किया है जिनसे ध्वनि चयन का अपनी भाषा में सफल एवं नवीन प्रयोग किये हैं। उदाहरण इस प्रकार हैं :–

उदा.:– **अलको ऽ ऽ, नील ऽ ऽ, गोपोल ऽ ऽ, ओह ऽ ऽ, हेट ऽ ऽ, ममी ऽ ऽ, लोगा ऽ ऽ, ऐ ऽ ऽ, धोगो ऽ ऽ, भोगो ऽ ऽ, डैडी ऽ ऽ, हूँ ऽऽ** आदि।

6- **शब्द–चयन :–** सुरेन्द्र वर्मा जी का शब्द–चयन बहुत विस्तृत और समृद्ध ज्ञान का परिचायक है। उन्होंने व्यावहारिक लोकभाषा का प्रयोग करने के लिए ठेठ सामान्य जन की भाषा का प्रयोग करने के साथ ही अरबी, फारसी, हिन्दी, अंग्रेजी और संस्कृत भाषा का प्रयोग किया है। उदाहरण :–

- **अरबी–फारसी, उर्दू के शब्द :–** उदा.:– **पुरतकुल्लफ, नोश, फरमाना, जलालत, जिन्दगी, सहूलियतें, यकायक, नाश्ता, दफ्तर, हाजिरी, बेहया, लिहाज, फजूल, नासमझ, शोरगुल** आदि।
- **तत्सम शब्द :–** सुरेन्द्र वर्मा जी के प्रमुख नाटकों में प्रयुक्त भाषा के शुद्ध तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है।

ISSN-2230-7540

उदा. :– अश्वमेघ, क्षणिक, ग्रंथ, अश्रुवर्षा, परिष्कृत, समुच्चय, वीणावादनशिक्षा, प्रबोधिनी, विजयदर्प, पाण्डुलिपि, वाक्चातुर्य, पुष्प, उच्छ्वास आदि।

- तद्भव शब्दः– उदा. :– सागर, पुल, दिन, रात, आँख, साँस, आकाश, हाथ, सात, पिता, कान, फूल, सिर आदि।

- देशज, स्थानीय, बोलचाल के शब्दः–

उदा. :– छल्ले, खिलखिलाहट, अक्कड़–बक्कड़, बम्बे–बो, मिमियाना, छोकरा, छज्जी, राजी–खुशी आदि।

- अंग्रेजी शब्दः–

उदा.:– प्लेट, चाकलेट, टोस्ट, असिस्टेंट, मैनेजर, सीनियर, कुकिंग, गैस, प्रीमियम, पोर्टफोलियों, डायरेक्टर, रिसीवर, बूस्टर, ट्रंककाल आदि।

7– सूक्तियाँ, मुहावरें एवं लोकोक्ति का प्रयोगः– सुरेन्द्र वर्मा जी ने सूक्तियाँ, मुहावरें एवं लोकोक्ति का प्रयोग किया है। उदा.:– **"प्रयत्न और प्राप्ति के दो अलग–अलग किनारे हैं और हम सबका जीवन इन दोनों के बीच में सेतुबन्ध ही तो है।"**[7]

- मुहावरें एवं लोकोक्तिः– उदा.:– **रोम–रोम सुलगना, बकरी की तरह मिमियाना, पैरों की धूल चाटना, बदन छलनी होना, घिग्घी बँधना, पिये बिना ही बहकना, गला रुँधना, एड़िया रगड़–रगड़ कर मरना, पागल भीड़ का हिस्सा बनना** आदि। इन सभी मुहावरों एवं लोकोक्तियाँ अथवा कहावतों का प्रयोग सुरेन्द्र वर्मा जी ने अपने नाटकों में किया है। जिससे रंगमंच पर उनके नाटकों में एक नवीनता, रोचकता देखने को मिलती है।

अंत में कहा जा सकता है कि समसामयिक हिन्दी नाटककारों में सुरेन्द्र वर्मा का विशिष्ट स्थान है। सुरेन्द्र वर्मा ने अपने नाटक में उपर्युक्त वर्णित भाषा संबंधित जो प्रयोग किये हैं, उनमें **ध्वनि, सूक्ति, भाषा में लय का नवीनतम रूप, वाक्यों के बीच में रिक्तियाँ, वाक्यों का अधूरापन, शब्दों एवं पदों का दुहराव, विराम चिन्हों का सार्थक प्रयोग** आदि है। इसके अतिरिक्त इनके नाटकों में **आलंकारिक, सर्जनात्मक** एवं **सांकेतिक भाषा** का भी प्रयोग हुआ है, यह सभी सुरेन्द्र वर्मा के नाटकों की उल्लेखनीय विशेषताएँ हैं। इस प्रकार के प्रयोग उनकी अपनी विशेषता है जो उन्हें अन्य समकालीन नाटककारों से भिन्न करती है। सुरेन्द्र वर्मा ने यद्यपि समकालीन परिवेश को लेकर तथा समकालीन लेखन में ढलकर लेखनी चलायी है किन्तु उनकी भाषा शैली के प्रस्तुतीकरण का ढ़ंग, रंगमंचीय प्रयोग आदि में कहीं–कहीं मौलिकता के दर्शन होते है। और सुरेन्द्र वर्मा की लेखन संबंधी विशिष्टता को उजागर करते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थः–

1. शिवनायक द्विवेदी, संस्कृत भाषा विज्ञान, पृ. 41

ISSN-2230-7540

2. ऊषा सक्सेना , हिन्दी उपन्यासों का शिल्पगत विकास, पृ. 96

3. सुरेन्द्र वर्मा, तीन नाटक, पृ. 30

4. सुरेन्द्र वर्मा, तीन नाटक, पृ. 79

5. सुरेन्द्र वर्मा, तीन नाटक, पृ. 58

6. सुरेन्द्र वर्मा, तीन नाटक, पृ. 117

7. सुरेन्द्र वर्मा, तीन नाटक, पृ. 28

GNITED MINDS Journals